



[Registration for SEP 2016 Classes](#)
[Get RSS Feed](#)
[Find us on facebook](#)
[Home](#) [About us](#) [Classes](#) [Knowledge Centre](#) [Articles](#) [Books](#) [Video](#) [Audio](#) [Contact us](#)

## 25-04-2016 (Important News Clippings)



To Download Click Here.

## बिज़नेस स्टैंडर्ड

### न्यायपालिका के प्रति बजट निर्माताओं की बेरुखी

मुख्य न्यायाधीशों की हमेशा एक शिकायत रही है कि न्यायपालिका के लिए बजट में पर्याप्त आवंटन नहीं होता है। न्यायपालिका के लिए आवंटित रकम महज 0.2 से 0.4 प्रतिशत बताई जाती है। यहां तक कि वर्षों से उपेक्षित सामाजिक, स्वास्थ्य एवं शिक्षा क्षेत्रों के लिए भी अब बजट में आवंटन बढ़ा दिया गया है। थोड़ी हैरत वाली बात यह भी है कि रक्षा क्षेत्र के लिए बजट में 10 प्रतिशत आवंटन हुआ है लेकिन पिछले करीब 50 साल में देश ने युद्ध का सामना नहीं किया है। रेलवे के लिए अलग से बजट की व्यवस्था की गई है।

लेकिन न्यायपालिका के लिए बजट में आवंटन जस का तस बना हुआ है। दिलचस्प बात यह है कि विभिन्न वित्त मंत्री कानूनी पेशे से ताल्लुक रखते रहे हैं। पिछले कई वर्षों से न्यायपालिका पर मुकदमों का बोझ बढ़ता जा रहा है लेकिन लोकतंत्र के इस तीसरे खंभे की दिक्कतें और जरूरतें समझने और इसे और सक्षम बनाने के लिए उपाय नहीं किए गए हैं। 2016-17 के के द्रीय बजट में भी कुछ नया देखने को नहीं मिला और इसमें कानून एवं न्याय के लिए महज 5,100 करोड़ रुपये का आवंटन हुआ है। इनमें 3,649 करोड़ रुपये चुनाव खर्च के लिए और 56 करोड़ रुपये न्यायिक बुनियादी संरचना के विकास के लिए आवंटित हुए हैं। यानी इस छोटी सी रकम में ही न्यायालयों और 40 से अधिक पंचायतों के न्यायिक कार्य और रिक्त पदों पर भर्तियों समेत कई दूसरे खर्च निपटाने हैं।

इस समय न्यायपालिका में नीचे स्तर पर 23 प्रतिशत और उच्च न्यायालय के स्तर पर 44 प्रतिशत पद रिक्त हैं। इनके अलावा नैशनल मिशन फॉर जस्टिस डिलिवरी एवं लीगल रिफॉर्म्स, नैशनल जुडिशियल एकेडमी और नैशनल लीगल सर्विसेस अथॉरिटी के भी खर्च निकालने हैं। कुछ कोष तो न्यायालय स्वयं ही सृजित करते हैं जिनमें न्यायालय शुल्क, स्टांप शुल्क, दोषियों पर जुर्माना और न्यायालय में जमा रकम पर ब्याज आदि शामिल हैं। लेकिन ये रकम सरकारी खजाने में चली जाती हैं और न्यायालय पंजीयक को इन्हें दोबारा हासिल करने के लिए सरकारी अधिकारियों के आगे मिन्नतें करनी पड़ती हैं। न्यायालय प्रबंधन की एक अंतरिम रिपोर्ट में पाया गया है कि देश के 18 राज्य न्यायपालिका पर 1 प्रतिशत से भी कम खर्च करते हैं।

न्यायपालिका की इस अनदेखी के परिणाम भी दिख रहे हैं। न्यायालय में विचाराधीन मामलों की तादाद बढ़ती जा रही है और प्रति 10 लाख मामलों की सुनवाई के लिए औसतन 17 न्यायाधीश हैं। अमेरिका में प्रति 10 लाख मुकदमों की सुनवाई के लिए 151 न्यायाधीश होते हैं। भारत के मुख्य न्यायाधीश टी एस ठाकुर ने हाल में ही बिल्कुल सटीक बात कही है कि वर्षों पुरानी इमारतों में न्यायालय की कार्यवाही चलती है जहां पर बैठने के लिए भी पर्याप्त जगह तक

आई.ए.एच. की परीक्षा में सफल होने के पुर

## आप IAS कैसे बनेंगे

डॉ. विजय अग्रवाल ₹195/-

आप IAS कैसे बनेंगे

लेखक: डॉ. विजय अग्रवाल

सभी पुस्तक विक्रेताओं के यहाँ उपलब्ध

## IAS पर 15 दिवसीय क्लासेस

डॉ. विजय अग्रवाल द्वारा

25 सितंबर 2016 से  
09 अक्टूबर 2016 तक

स्थान : भोपाल, मध्य प्रदेश

सीमित सीट्स  
एडमिशन प्रारम्भ

उपलब्ध नहीं होती है। यहीं नहीं, कई न्यायालय तो ऐसे हैं जहां स्टैनोग्राफर तक नहीं हैं और न्यायाधीश स्वयं ही सारी बातें लिखते हैं।

कुछ विश्लेषकों के अनुसार न्यायपालिका के लिए बुनियादी सुविधाओं पर ध्यान नहीं दिया गया तो लंबित मामलों के निपटारे में कम से कम 466 साल लग जाएंगे। ताज्जुब की बात तो यह है कि विचाराधीन कैदियों को कई बार इतने दिन जेलों में रहना पड़ता है जितने दिन उनकी वास्तविक सजा की अवधि भी नहीं होगी। परेशानी यहीं खत्म नहीं होती। न्यायपालिका को एकमुश्त रकम की प्राप्ति नहीं होती बल्कि यह विभिन्न स्रोतों से टुकड़ों में मिलती है। केंद्र और राज्य में कोई तालमेल नहीं है। आवंटन और व्यय विभिन्न मदों में खंडित हैं। ऐसे में न्यायपालिका को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वित्त आयोग, नियोजन संस्थाओं और दूसरे वित्तीय संस्थानों के दरवाजे खटखटाने पड़ते हैं। जो लोग रकम निर्गत करने का अधिकार रखते हैं वे अपनी जिम्मेदारी अक्सर एक दूसरे पर टालते रहते हैं। विधायिका कानून तो बनाती है लेकिन इसके क्रियान्वयन के लिए खर्च तय नहीं करती है। करीब 60 प्रतिशत कानून केंद्र सरकार के दायरे में आते हैं और लगभग इतनी ही तादाद में मामले सरकार और संबंधित संस्थानों की तरफ से आते हैं। बावजूद इसके कार्यपालिका न्यायपालिका की खस्ता हालत के मुद्दे पर चुप्पी साधे हुए है। बजट के समय में विभिन्न क्षेत्रों के लिए पैरवी करने वाले लोग अपनी मांगें मनवाने के लिए पूरा जोर लगाते हैं। लेकिन न्यायाधीश अपनी जरूरतों के लिए इस तरह की शैली नहीं अपनाते।

हाल में देश के शीर्ष न्यायाधीश अतिवाद हिंसा से निपटने के विषय पर अधिकारियों के व्याख्यान सुनने के लिए मध्य प्रदेश में एकत्र हुए। लेकिन किसी ने भी बजट पर चर्चा करने की जरूरत नहीं समझी। कानूनी पेशा इस क्षेत्र में रुचि नहीं रखता क्योंकि शायद हालात जितने बिगड़ेंगे उनके कारोबार के लिए उतना ही अच्छा होगा। न्यायपालिका से भी बजट तैयार करने में विचार लिए जाने चाहिए और उसके लिए भी एक एकीकृत स्रोत से वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था होनी चाहिए। न्यायपालिका के लिए बजट में एक नियत दर हो सकती है। जब विधेयक पेश किया जाता है उस समय उसके कानूनी पहलू से जुड़े व्यय का अनुमान भी दिया जाना चाहिए। न्यायपालिका को भी वित्तीय स्वायत्तता दी जानी चाहिए और नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक को निगरानी की भूमिका संभालनी चाहिए। विधि आयोग की रिपोर्ट में स्थिति से निपटने के और भी कई तरीके खोजे जा सकते हैं, बशर्ते वित्त मंत्रियों में ऐसा करने का जज्बा होना चाहिए।

## THE ECONOMIC TIMES

### India must build intellectual property

April 26 is World Intellectual Property Day. For most Indians, intellectual property is a combination of Pierre-Joseph Proudhon and Robin Hood. The French anarchist famously declared property to be theft. Indians, few of whom put in the hard slog required to create intellectual property, readily agree, and are eager to do to the owners of intellectual property what Robin Hood did to the rich. Karl Marx, no fan of property himself, pronounced Proudhon to be confused: you can steal something only if it already belongs to someone, meaning property must precede theft and so cannot be theft. Indians are equally wrong to disrespect intellectual property.

It is not enough to be formally compliant with global regimes on intellectual property rights. India is WTO compliant on the subject. And its patent law's Section 3(d), requiring a novel form of a patent-protected molecule to show improved therapeutic efficacy for it to secure a separate patent, is a model for the rest of the world, even if multinational pharma hates it. The problem in pharma is confined to a trigger-happy attitude towards compulsory licensing that eschews room for negotiated price reductions backed up with bulk purchase commitments orchestrated by the government.

The emerging problem area is electronics, particularly telecom. Indian companies glibly disregard the need to license technologies, leading to legal disputes with patent holders. The larger problem is consistent failure by Indian firms to carry out research and development (R&D) that would create intellectual property. Trade, tariff and tax policies that discourage genuine domestic value addition and incentivise masquerading trade as manufacture, are to blame as well.

For Make in India to be something more substantive than simple assembly of complex parts produced elsewhere, India has to focus on domestic R&D and creation of intellectual property.

Overhaul of university funding and focus, legal clarity on and protection of intellectual property and rational trade and tariff policy — action is called for on multiple fronts.

## Not population but social development

Andhra Pradesh chief minister Nara Chandrababu Naidu wants everyone to have more children. He worries that India is rapidly greying and would soon end up in a situation akin to ageing Japan. Naidu's advice is gratuitous and in poor taste.

In 2013, the average Indian woman gave birth to 2.3 children — a number called the 'fertility rate'. This is still above what demographers call the 'replacement rate', which measures the average number of children per woman required to keep the population stable, reckoned to be 2.1. So, Naidu need not worry himself sick about India turning into Japan anytime soon.

India's population growth is falling as incomes grow and social conditions change for the better. In 2013, for example, the poorest and least socially progressive states had the highest fertility rates: Bihar's was 3.4, Uttar Pradesh (3.1), Madhya Pradesh (2.9) and Rajasthan (2.8). The social condition, educational qualification and employment opportunities of women in these states are appalling. Without exception, these states are economically backward.

Unsurprisingly, socially progressive West Bengal (1.6), Tamil Nadu and Delhi (1.7) and Kerala (1.8) have the lowest fertility rates in India. The conclusion is obvious: as incomes rise, couples decide to invest more in their children, rather than producing armies of future farmhands. This fits with the half-century-old insights of Gary Becker, who won the Nobel Prize for economics in 1992, for his work on 'human capital'.

The people of Andhra Pradesh, where the fertility rate is 1.8, on par with Kerala, choose to have fewer kids because they want to invest more in each child. That way, these parents hope their children will be smarter and have more opportunities than they ever had. Who is Naidu to tell them otherwise? Get social development right, population will right itself.



**THE TIMES OF INDIA**

## Cap mania: Instead of building capacity for a 21st century India, we seem headed back to the 1970s

Prime Minister Narendra Modi once said that India could become a \$20 trillion economy. This had seemed an intellectual breakthrough at the time because our political class is conditioned to think in terms of shortages, restrictions, bans, poverty. Material poverty follows intellectual poverty. And tackling shortages of a desired entity by restricting demand instead of looking to boost supply is a hallmark of that povertarian mindset. Unfortunately that povertarian mindset still rules the roost, including in BJP.

It's very worrying that the Centre is considering capping registration of new vehicles and restricting purchase of second cars (use of new cars in place of old ones will curb rather than increase air

pollution). This is on the heels of the odd-even scheme being forced down Delhi's throat, despite discouraging data on its ability to tackle either pollution or congestion. What authorities don't get is that people ply private vehicles because public transport isn't adequate for their needs.

In fact, even if new modes of public transport should come up on their own without the state doing anything, government can go all out to quash them. Thus, the Delhi government has told the Delhi high court that the new app-based cab aggregators are operating "illegally" in the city. India has too long been hobbled by the command and control mindset, where instead of playing an enabling role and expanding horizons for citizens, the state relies instead on petty prohibitions – whether it comes to cars, education, healthcare, food, drinks or even cricket matches.

From Haryana to Maharashtra, the beef taboo has become the equivalent of blasphemy in Pakistan. The ban on alcohol is spreading across states in complete defiance of social or economic logic. In Delhi schools are being told they can't fire any teacher without sarkari approval (which is to say, not at all) and they must also report every chair, library book and petri dish to the sarkar. In healthcare, the Centre now wants to stop doctors from practising abroad. This is despite India having many medical centres of excellence and being established on the medical tourism map due to the expertise of doctors who have worked abroad. If the problem is shortage of doctors, why can't more medical colleges be set up? Increase capacity instead of punishing the aspirational drive. Grow supply instead of choking demand.

## चीन को भारत का सही जवाब

चीन चाहे लाख भड़के, हमें अपने देश का हित देखना चाहिए और यह सोचना चाहिए कि एशिया प्रशांत क्षेत्र में स्थायित्व और शांति कैसे बरकरार रह सकती है। अमेरिका के रक्षा मंत्री एस्टन कार्टर और भारत के रक्षा मंत्री मनोहर पर्रिकर ने हाल में जो घोषणाएँ कीं वे अत्यंत ही महत्वपूर्ण हैं। दोनों मंत्रियों ने इस बात का ऐलान किया कि दोनों देशों की सैन्य सुविधाओं को साझा करने के लिए 'लॉजिस्टिक्स एक्सचेंज' 'मेमोरेंडम ऑफ एजीमेंट' पर सैद्धांतिक रूप से सहमति बन गई है। इस एजीमेंट के तहत भारत और अमेरिका दोनों देश जरूरत पड़ने पर एक दूसरे की सैन्य छावनी एयरबेस और नौसेना बेस का उपयोग कर सकेंगे। यह एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण ऐलान है। वर्तमान में चीन एशिया-प्रशांत क्षेत्र में तेजी से अपनी दादागीरी दिखा रहा है, जिसकी पुख्ता जानकारी अमेरिकी सेटलाइट ने दी है। चीन ने साउथ चाइना सी के छोटे-छोटे द्वीपों पर तेजी से कब्जा करके अपने भूभाग से 500 किलोमीटर दूर समुद्र में 'द ग्रेट वॉल ऑफ सैंड' अर्थात् बालू की दीवार खड़ी कर दी है।

कई द्वीपों को मिलाकर उसमें 3000 मीटर लंबी हवाई पट्टी बनाई है। साउथ चाइना सी के जिस क्षेत्र को चीन ने छोटे-छोटे द्वीपों को मिलाकर सूखी जमीन बना ली है, उसने हाल में वहां एक हवाई अड्डा भी बना लिया है और कुछ सप्ताह पहले वहां एक लड़ाकू हवाई जहाज इस क्षेत्र में उतारा गया। चीन इसे अपने पर्यटन उद्योग का विस्तार बता रहा है, परंतु अमेरिका ने अपने सेटलाइट से यह पता लगा लिया कि इन क्षेत्रों में चीन अपना सैनिक विस्तार कर रहा है। कहीं ऐसा न हो कि चीन इन टापुओं पर कब्जा कर ले और निकटवर्ती दक्षिण-पूर्व एशिया के



**चीन की बढ़ती हुई दादागीरी के आलोक में अमेरिका के मित्र देशों ने माना है कि चीन के इस दुस्साहस को रोकना आवश्यक है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी कहा है कि 'साउथ चाइना सी' को संसार के सभी व्यापारिक जहाजों के आवागमन के लिए खुला रहना चाहिए। किसी भी देश को यह हक नहीं है कि वह इसमें अड़ंगा डाले। अमेरिका का 'साउथ चाइना सी' के रास्ते हर 1200 अरब डालर का व्यापार होता है। इस संदर्भ में देखा जाए तो अमेरिकी रक्षा मंत्री का भारत और अमेरिका के बीच सैनिक संधि का ऐलान कई मायने में महत्वपूर्ण है।**

देश हाथ मलते रह जाएं। दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के साथ समझौता करने के लिए चीन पर अमेरिका पहले से ही दबाव बनाता रहा है, लेकिन चीन पर इसका कोई असर होता नहीं दिख रहा है, वह खुद को मालिक ही समझ रहा है। तेल और गैस के विशाल भंडार वाले इन क्षेत्रों पर चीन का आधिपत्य दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के लिए अत्यंत चिंताजनक बात होगी।

चीन की बढ़ती हुई दादागीरी के आलोक में अमेरिका के मित्र देशों ने माना है कि चीन के इस दुस्साहस को रोकना आवश्यक है। प्रधानमंत्री नरेंद्र

मोदी ने भी कहा है कि 'साउथ चाइना सी' को संसार के सभी व्यापारिक जहाजों के आवागमन के लिए खुला रहना चाहिए। किसी भी देश को यह हक नहीं है कि वह इसमें अड़ंगा डाले। अमेरिका का 'साउथ चाइना सी' के रास्ते हर 1200 अरब डालर का व्यापार होता है। इस संदर्भ में देखा जाए तो अमेरिकी रक्षा मंत्री का भारत और अमेरिका के बीच सैनिक संधि का ऐलान कई मायने में महत्वपूर्ण है। चीन की मौजूदा दादागीरी के आलोक में यदि अमेरिका के साथ कोई सैन्य समझौता होता है तो वह निश्चय ही भारत के लिये बहुत लाभप्रद होगा। चीन का भारत विरोधी रुख इसी से स्पष्ट हो जाता है कि हाल में संयुक्त राष्ट्र में पवनकोट हमले के मास्टरमाइंड मसूदा अजहर पर प्रतिबंध लगाने को उसने वीटो कर दिया।

अब यह स्पष्ट हो गया है कि वह पाकिस्तान को भारत की तुलना में हर तरह की तरजीह देना चाहता है। जब चीन के राष्ट्रपति भारत आए थे तो भारत में उनका भव्य स्वागत हो रहा था। परंतु उसी समय चीनी सेना ने बड़े पैमाने पर लद्दाख में घुसपैठ कर दी थी। चीन ने फिलीपींस के कई निकटवर्ती द्वीपों को हथिया लिया है। चीन एशिया प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका की उपस्थिति किसी भी स्तर में नहीं चाहता है।

भारत-अमेरिका सैन्य सहयोग की बात ने चीन को और उद्वेलित कर दिया है। चीन चाहे लाख भड़के, हमें अपने देश का हित देखना चाहिए और यह सोचना चाहिए कि एशिया प्रशांत क्षेत्र में स्थायित्व और शांति कैसे बरकरार रह सकती है। उधर अमेरिका को भी अपने पाकिस्तान के प्रति सहयोगात्मक रवैये पर विचार करना होगा।

(लेखक पूर्व सांसद एवं पूर्व राजदूत हैं)

Share this:



Like this:



Be the first to like this.

Related

योजना अगस्त 2014: बजट और स्वस्थ भारत का सपना  
August 31, 2014  
In "Knowledge Centre"

योजना मार्च 2016 : गाँव और किसान का बजट  
April 9, 2016  
In "Knowledge Centre"

योजना मार्च 2016 : नवाचार की ओर बजट के कदम  
April 16, 2016  
In "Knowledge Centre"

No Comments »

← 25-04-16 (Monday Audio For Excellence)

[Edit this entry.](#)

### Leave a Reply

Enter your comment here...

☺